Gyanvividha, Vol.-3; Issue-1 (Jan.-March) 2026 : PP-278-288

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-4.5
Vol.-3; Issue-1 (Jan.-March) 2026
Page No.- 278-288
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

**Author's :**

**मनोज कुमार पटेल**

सहायक शिक्षक, काशीडीह, चंद्रपुर, छत्तीसगढ़.
पीएच.डी. शोधार्थी (हिन्दी), आई.एस.बी.एम.,
विश्वविद्यालय, गरियाबंद, छत्तीसगढ़.

Corresponding Author :

**मनोज कुमार पटेल**

सहायक शिक्षक, काशीडीह, चंद्रपुर, छत्तीसगढ़.
पीएच.डी. शोधार्थी (हिन्दी), आई.एस.बी.एम.,
विश्वविद्यालय, गरियाबंद, छत्तीसगढ़.

# जनजातीय जीवन-दर्शन और समकालीन चुनौतियाँ : तुलनात्मक समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

**सारांश :** जनजातीय जीवन-दर्शन मानव सभ्यता के सबसे प्राचीन, पारिस्थितिक रूप से जुड़े, समुदाय-प्रधान और आध्यात्मिक रूप से एकीकृत विचार-प्रणालियों में से एक है। अपनी समृद्धता के बावजूद आज जनजातीय समाज वैश्वीकरण, बाजार-प्रसार, प्रशासनिक केंद्रीकरण, प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और सांस्कृतिक एकरूपता जैसी बहुआयामी चुनौतियों का सामना कर रहा है। यह शोध-पत्र तुलनात्मक समाज-शास्त्रीय दृष्टिकोण से जनजातीय जीवन-दर्शन की पड़ताल करता है और यह विश्लेषण करता है कि समकालीन संरचनात्मक शक्तियाँ किस प्रकार आदिवासी मूल्यों से अंतःक्रिया करती हैं। नृवंशविज्ञान, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र और नीतिगत अध्ययनों के आधार पर यह अध्ययन समुदाय, प्रकृति, संबंध-व्यवस्था, पारस्परिकता और आध्यात्मिकता जैसी जन-जातीय अवधारणाओं की उस वैकल्पिक क्षमता को उजागर करता है जो आधुनिक विकास प्रतिमानों को चुनौती देती है। शोध यह भी रेखांकित करता है कि भूमि-विस्थापन, सांस्कृतिक क्षरण, पहचान-राजनीति, लैंगिक हाशियाकरण, स्वास्थ्य असमानताएँ, विस्थापन और शैक्षिक बहिष्करण जैसी प्रमुख चुनौतियाँ 21वीं सदी के आदिवासी जीवन को पुनर्परिभाषित कर रही हैं। अंततः यह शोध-पत्र जनजातीय समुदायों के साथ सांस्कृतिक रूप से सम्मानजनक और टिकाऊ संवाद एवं विकास की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।

**बीज शब्द :** जनजातीय जीवन-दर्शन, तुलनात्मक समाजशास्त्र, सांस्कृतिक क्षरण, भूमि-विस्थापन आदिवासी पहचान।

1. परिचय : भारतीय उपमहाद्वीप की जनजातियाँ प्रकृति, संस्कृति और आध्यात्मिकता के अद्वितीय संगम पर आधारित जीवन-दर्शन का पालन करती हैं, जिसमें मानव–प्रकृति संबंध पारस्परिक सम्मान, सहअस्तित्व और संतुलन पर आधारित हैं (Xaxa, 2005)। जंगल, नदी, भूमि और संसाधन उनके लिए केवल आर्थिक पूँजी नहीं, बल्कि सांस्कृतिक स्मृति

और पूर्वजों की धरोहर हैं, जिससे उनकी विश्व-दृष्टि प्रकृति-केंद्रित और सामुदायिकता-प्रधान बनती है (Bodley, 2012)। कृषि, अनुष्ठान, कला, चिकित्सा और सामाजिक संगठन जैसे जीवन के सभी क्षेत्रों में यह समग्र दृष्टि स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

परंतु 21वीं सदी के विकास मॉडल खनन, औद्योगिक परियोजनाएँ, भूमि-अधिग्रहण, शहरीकरण, बाजार का विस्तार, और सांस्कृतिक एकरूपीकरण ने जनजातीय समाज को एक तीव्र संक्रमण की स्थिति में पहुँचा दिया है (Pati, 2018)। वनाधिकारों में व्यवधान, विस्थापन, भाषाओं के लुप्त होने का खतरा और युवा पीढ़ी में सांस्कृतिक दूरी जैसी चुनौतियाँ उनके जीवन-दर्शन की मूल संरचना को प्रभावित कर रही हैं।

इन परिवर्तनों की समझ के लिए तुलनात्मक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह पारंपरिक और आधुनिक सामाजिक संरचनाओं के अंतःसंबंध, सांस्कृतिक पहचान और विकास-नीतियों के प्रभाव का विश्लेषण करता है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य इसी दृष्टि से यह समझना है कि आधुनिकता और विकास-प्रतिमानों के दबाव में जनजातीय जीवन-दर्शन किस प्रकार परिवर्तित हो रहा है और सांस्कृतिक सम्मान व संतुलन पर आधारित विकास-दृष्टि का निर्माण किस तरह संभव है।

## 2. सैद्धांतिक रूपरेखा (Theoretical Framework)

**2.1 जनजातीय जीवन-दर्शन की अवधारणा (Concept of Tribal Worldview) :** जनजातीय जीवन-दर्शन उस संज्ञानात्मक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक संरचना का प्रतिनिधित्व करता है जिसे आधुनिक शोधकर्ता *Indigenous Epistemology* के रूप में परिभाषित करते हैं। यह ज्ञान-संरचना मूलतः अनुभवजन्य (experiential), सामुदायिक (collective), पारिस्थितिक (ecological) और आध्यात्मिक (spiritual) स्वरूपों पर आधारित होती है। जनजातीय ज्ञान-विज्ञान किसी बाहरी ज्ञान-श्रेणी पर आधारित न होकर स्वयं समुदाय की प्रकृति-आधारित अंतर्दृष्टि और जीवन-अनुभव से उत्पन्न होता है।

इस अवधारणा के प्रमुख घटक निम्न हैं:

- **प्रकृति के साथ आध्यात्मिक संबंध** – जंगल, पर्वत, नदियाँ, पशु-पक्षी आदि केवल संसाधन नहीं बल्कि जीवित इकाइयाँ, पूर्वजों का विस्तार और आध्यात्मिक संरक्षक माने जाते हैं (Gadgil & Guha, 1995)।
- **समुदाय-केंद्रित नैतिकता** – नैतिक निर्णय व्यक्तिगत लाभ के आधार पर नहीं बल्कि सामुदायिक हित, सद्भाव और संतुलन पर आधारित होते हैं।
- **लोक-अर्थव्यवस्था** – जनजातीय अर्थव्यवस्था वस्तु-विनिमय, सामूहिक श्रम, स्वयं-निर्भरता और सह-उत्पादन जैसी पारंपरिक प्रणालियों पर आधारित रहती है (Bodley, 2012)।
- **अनुष्ठान आधारित सामाजिक एकता** – जनजातीय अनुष्ठान सामूहिकता, स्मृति-निर्माण, पूर्वजों से जुड़ाव और सामाजिक एकता को बनाए रखने के साधन हैं (Turner, 1969)।
- **समतामूलक श्रम विभाजन** – अधिकांश जनजातीय समाजों में लैंगिक या वर्गीय असमानता न्यूनतम होती है, और श्रम विभाजन सहयोग और जैविक आवश्यकता पर आधारित होता है।

Durkheim (1912) की *collective consciousness* की अवधारणा यह स्पष्ट करती है कि जनजातीय समाजों में सामुदायिक मूल्य, अनुष्ठान और सामूहिक भावनाएँ सामाजिक व्यवस्था के प्रमुख आधार हैं। इसी प्रकार, Levi-Strauss (1963) का *structuralism* जनजातीय मिथकों, प्रतीकों और सामाजिक संबंधों को गहरी संरचनात्मक तर्कशीलता से जोड़ता है, जहाँ प्रत्येक सांस्कृतिक तत्व एक व्यापक अर्थ-व्यवस्था का हिस्सा होता है।

इन सैद्धांतिक आधारों से यह समझा जा सकता है कि जनजातीय जीवन-दर्शन कोई बिखरी हुई प्रथाओं का समूह नहीं बल्कि एक संपूर्ण *ज्ञान-प्रणाली* है जो समुदाय की अस्तित्वगत आवश्यकताओं, आध्यात्मिक दृष्टि और सामाजिक

संगठन को परिभाषित करती है।

**2.2 तुलनात्मक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण (Comparative Sociological Approach) :** तुलनात्मक समाजशास्त्र सामाजिक संस्थाओं, मूल्य-प्रणालियों और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के अंतर-सामाजिक विश्लेषण का उपकरण प्रदान करता है। यह दृष्टिकोण यह समझने में मदद करता है कि कैसे विभिन्न प्रकार के समाज-जनजातीय, कृषक, ग्रामीण, शहरी और औद्योगिक-अपने-अपने सामाजिक ढांचे और जीवन-दर्शन का निर्माण करते हैं (Albrow, 1996)।

इस पद्धति द्वारा निम्न प्रकार के विश्लेषण संभव होते हैं:

- **मूल्य प्रणालियों का तुलनात्मक विश्लेषण** – यह अध्ययन करता है कि समुदाय नैतिकता, पारिस्थितिक संवेदना, संबंध-व्यवस्था और आर्थिक व्यवहार को कैसे परिभाषित करते हैं।
- **सत्ता संरचनाओं का अध्ययन** – विभिन्न समाजों में निर्णय-प्रक्रिया, नेतृत्व मॉडल, और शक्ति-संबंध कैसे निर्मित होते हैं, इसका विश्लेषण किया जाता है (Becker, 1999)।
- **संसाधन-वितरण की तुलना** – भूमि, पानी, वन-संपदा, श्रम और उत्पादन-तंत्र के वितरण को तुलनात्मक संदर्भ में समझा जाता है।
- **आधुनिकीकरण के प्रभाव का आकलन** – विकास नीतियाँ, तकनीकी परिवर्तन, शहरीकरण, और बाजार प्रणालियाँ जनजातीय समाजों पर क्या प्रभाव डालती हैं, इसका विश्लेषण किया जाता है (Inglehart & Baker, 2000)।
- **सांस्कृतिक प्रतिरोध रणनीतियों की पहचान** – यह स्पष्ट करता है कि बाहरी दबावों के बीच जनजातीय समाज अपनी सांस्कृतिक पहचान, भाषाओं, अनुष्ठानों और ज्ञान-प्रणालियों को कैसे संरक्षित रखते हैं।

तुलनात्मक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण यह भी दर्शाता है कि आधुनिकता और परंपरा के बीच उभरने वाले तनाव केवल सामाजिक संरचना के भिन्न होने का परिणाम नहीं, बल्कि उन गहरे मूल्य-आधारित विरोधों का संकेत हैं जिन पर अलग-अलग सभ्यताएँ टिकी होती हैं। विशेषकर जनजातीय जीवन-दर्शन और राज्य-प्रधान विकास मॉडल के बीच का अंतर इस पद्धति द्वारा अधिक स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

इस प्रकार, सैद्धांतिक रूप से जनजातीय जीवन-दर्शन और समकालीन चुनौतियों का अध्ययन तुलनात्मक समाजशास्त्र के आधार पर एक बहु-स्तरीय विश्लेषण को संभव बनाता है, जो सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक और पर्यावरणीय संरचनाओं को परस्पर जोड़कर देखता है।

**3. जनजातीय जीवन-दर्शन के आधारभूत तत्व**

**3.1 प्रकृति-केंद्रित विश्वदृष्टि (Eco-centric Worldview) :** जनजातीय जीवन-दर्शन का सबसे महत्वपूर्ण स्तंभ प्रकृति के साथ उसका जैव-आध्यात्मिक संबंध है। जनजातीय समूह प्रकृति को एक **जीवित, चेतन और आत्मा-युक्त सत्ता** मानते हैं, जिसके साथ मनुष्य का संबंध मात्र उपयोग का नहीं बल्कि **सह-अस्तित्व** और **परस्पर निर्भरता** का होता है (Descola, 2013)।

प्रकृति के साथ यह संबंध कई माध्यमों से व्यक्त होता है:

- जंगल उनके **आहार**, **औषधि**, **शिल्प**, **अनुष्ठान**, और **पहचान** का स्रोत है।
- नदियाँ और पर्वत **पूर्वजों के प्रतीक**, शक्तियों के निवास-स्थान, तथा सामुदायिक जीवन की धुरी माने जाते हैं।
- जानवर और वनस्पतियाँ **कुल-टोटेम** के रूप में सामुदायिक पहचान का आधार बनते हैं।

उनकी अर्थव्यवस्था का स्वरूप **सतत उपयोग** (sustainable use) पर आधारित है, जिसमें **'लेने से अधिक लौटाने'** का सिद्धांत मूलभूत है।

भारत की तीन प्रमुख जनजातियों के उदाहरण इस विश्वदृष्टि को स्पष्ट करते हैं:

- **गोंड समाज** का 'लीमा'-बीजों का पवित्र संरक्षण और प्रकृति को मातृ-शक्ति के रूप में देखना।
- **भील समाज** का 'हलमा'-सामूहिक श्रम, जल-संरक्षण, और पर्यावरण पुनर्निर्माण।
- **नागा समाज** की 'जूम खेती'-भूमि को नियमित विश्राम देकर प्राकृतिक पुनरुत्पादन चक्र का सम्मान।

यह दृष्टि आधुनिक विकास मॉडल की उस सोच को चुनौती देती है जिसमें प्रकृति को मात्र संसाधन या वस्तु के रूप में देखा जाता है।

**3.2 सामुदायिक जीवन और सहअस्तित्व (Community Life and Co-existence) :** जनजातीय समाज की सामाजिक संरचना का केंद्र **सामूहिकता** है। यहाँ व्यक्ति का अस्तित्व समुदाय के भीतर निहित होता है, और सामाजिक मूल्य **'हम'** की अवधारणा पर आधारित होते हैं (Béteille, 1998)।

सामुदायिक जीवन में:

- निर्णय **ग्रामसभा, मांदई (गोंड), दरबार (नागा)** जैसी संस्थाओं द्वारा सामूहिक रूप से लिए जाते हैं।
- **परस्पर सहयोग (reciprocity)** सामाजिक बंधन का मूल तत्व है-जैसे खेत-तैयारी, घर-निर्माण, त्योहार आयोजन।
- भूमि, जल, वन और पशु-संपदा का **सामूहिक स्वामित्व** निजी संपत्ति की अवधारणा को सीमित करता है।
- श्रम का वितरण **समतामूलक**—महिला, पुरुष, युवा-सभी की भूमिकाएँ समान रूप से महत्व रखती हैं।
- सामुदायिक उत्सव जैसे **मड़ई, कर्म, सरहुल, हॉर्नबिल फेस्टिवल** सांस्कृतिक एकता के माध्यम हैं।

इस प्रकार, जनजातीय समाज में सामाजिक-संबंध शक्ति या पूँजी पर नहीं बल्कि **विश्वास, बंधुत्व और सामूहिक उत्तरदायित्व** पर निर्मित होते हैं।

**3.3 लोकज्ञान और मौखिक परंपरा (Folk Knowledge and Oral Tradition) :** जनजातीय ज्ञान-प्रणाली आधुनिक 'लिखित ज्ञान' की अपेक्षा **अनुभव-आधारित, पीढ़ीगत और मौखिक परंपरा** पर आधारित होती है। Hobsbawm (1983) के अनुसार, यह परंपरा केवल सांस्कृतिक प्रतीकों को ही नहीं संजोती, बल्कि समुदाय की **स्मृति, इतिहास, पर्यावरणीय ज्ञान और सामाजिक नैतिकताओं** को भी संरक्षित करती है।

मौखिक परंपराओं में शामिल हैं:

- **लोककथाएँ और मिथक**—सृष्टि, पूर्वजों, प्रकृति की उत्पत्ति का ज्ञान।
- **गीत और नृत्य**—कृषि-चक्र, ऋतु-परिवर्तन, प्रेम, शिकार, लोक-देवताओं के वर्णन।
- **बोली-भाषाएँ**—जिनमें पारिस्थितिक ज्ञान, औषधीय वनस्पतियों, मौसम और कृषि-तकनीकों का विवरण होता है।
- **टोटेमवाद**—प्रकृति के प्रतीकों से सामाजिक पहचान और वर्जनाओं का निर्माण।
- **शिल्प-कला और प्रतीकात्मक डिज़ाइन**—जैसे गोदना, बोंग, कोया पुनेम, नागा हथकरघा—जो सामाजिक और आध्यात्मिक अर्थ धारण करते हैं।

यह ज्ञान प्रणाली आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान के समानांतर एक **एकीकृत, समग्र और जीवन-केंद्रित epistemology** प्रस्तुत करती है।

**3.4 आध्यात्मिकता और अनुष्ठानिक संरचना (Spirituality and Ritual Structure) :** जनजातीय धर्म जिसे कई शोधकर्ता **एनीमिज़्म**, **नेचर-रिलिजन**, या **एथनिक स्पिरिचुअलिटी** कहते हैं, जीवन और प्रकृति को पवित्र मानता है (Tylor, 1871)।

आध्यात्मिकता के कुछ मुख्य आयाम :

- **पूर्वज-पूजा**—पूर्वजों को समुदाय का नैतिक संरक्षक माना जाता है।
- **प्रकृति-पूजा**—वनदेवी, जलदेव, पाथलगाड़ी, सूर्य-चंद्र देवता आदि की आराधना।
- **अनुष्ठानिकता**—कृषि, शिकार, फसल-कटाई, जन्म-मृत्यु, विवाह—हर क्रिया में आध्यात्मिक भाव।
- **शामानवाद (Shamanism)**—भविष्यवाणी, उपचार, सामाजिक एकता के लिए आध्यात्मिक मध्यस्थ।
- **संगीत और नृत्य**—धार्मिक अनुष्ठानों का अभिन्न भाग, जो सामुदायिक ऊर्जा को सक्रिय करते हैं।

यह संपूर्ण आध्यात्मिक संरचना 'धर्म' को एक संस्थागत व्यवस्था के रूप में नहीं बल्कि **दैनिक जीवन की पवित्रता** के रूप में देखती है।

4. समकालीन चुनौतियाँ : 21वीं सदी में जनजातीय समाज वैश्विक संरचनात्मक दबावों-वैश्वीकरण, नवउदारवाद, जलवायु परिवर्तन, राज्य-नीति और तकनीकी आधुनिकीकरण-के प्रभाव में हैं। तुलनात्मक समाजशास्त्रीय दृष्टि से देखा जाए तो भारत के Gond, Oraon, Santhal, Bhil समुदाय, ऑस्ट्रेलिया के Aboriginals, अफ्रीका के Maasai और लैटिन अमेरिका के Mapuche समान रूप से भूमि-अधिग्रहण, विस्थापन और सांस्कृतिक विघटन का सामना कर रहे हैं (Fernandes, 2007; IWGIA, 2020)।

**मुख्य चुनौतियाँ :**

1. **भूमि-अधिग्रहण और विस्थापन:** खनन, बाँध और औद्योगिक परियोजनाएँ सामाजिक नेटवर्क, आजीविका और सांस्कृतिक स्थिरता को प्रभावित कर रही हैं।
2. **सांस्कृतिक और भाषाई संकट:** वैश्वीकरण और शहरीकरण जनजातीय भाषाओं और संस्कृतियों को कमजोर कर रहे हैं, जिससे सांस्कृतिक स्मृति एवं पहचान खतरे में है (UNESCO, 2021)।
3. **बाजार अर्थव्यवस्था का दबाव:** नवउदारवादी पूँजीवाद ने पारंपरिक अर्थव्यवस्था को अस्थिर किया; प्राकृतिक संसाधनों और लोककौशल का व्यावसायीकरण बढ़ा (Scott, 2009)।
4. **राजनीतिक हाशियाकरण:** संवैधानिक संरक्षण के बावजूद जनजातियों की राजनीतिक भागीदारी सीमित है, संसाधनों और निर्णयाधिकार पर बाहरी नियंत्रण मौजूद है (Rath, 2006)।
5. **स्वास्थ्य और पोषण असमानताएँ:** उच्च कुपोषण, एनीमिया, रोग और स्वच्छता की कमी पारंपरिक औषधीय ज्ञान को कमजोर करती है (WHO, 2019)।
6. **शैक्षिक बहिष्करण:** मातृभाषा आधारित शिक्षा और सांस्कृतिक सामग्री का अभाव, उच्च ड्रॉप-आउट दर, तथा शिक्षकों का भेदभाव (Nambissan, 2010)।
7. **लैंगिक मुद्दे:** महिलाओं पर शोषण, घरेलू हिंसा, असुरक्षित रोजगार और संसाधन निर्णयों में सीमित अधिकार का दबाव (Elwin, 1964; Kujur, 2019)।

संक्षेप में, जनजातीय समाज वैश्विक और स्थानीय दबावों के बीच सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक अस्थिरता का सामना कर रहा है, जबकि तुलनात्मक दृष्टि यह दिखाती है कि ये चुनौतियाँ विश्व स्तर पर समान रूप से प्रकट होती हैं।

**5. तुलनात्मक अध्ययन: विभिन्न जनजातीय समुदायों की दृष्टि :** तुलनात्मक समाजशास्त्र जनजातीय समुदायों के बीच समानताओं और भिन्नताओं की संरचनात्मक समझ प्रदान करता है। भारत के भीतर ही नहीं, वैश्विक स्तर पर भी जनजातीय जीवन-दर्शन विविध रूपों में प्रकट होता है। यहाँ भारतीय जनजातियों के चार प्रमुख समूहों—गोंड, संथाल, नागा-मिजो, और भील-मीणा—का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत है।

**5.1 गोंड और संथाल समाज: भूमि, विश्वास और सामुदायिकता :** गोंड (मध्य भारत) और संथाल (झारखंड-ओडिशा-बंगाल) दोनों कृषि-प्रधान समाज हैं, जिनकी सामाजिक संरचना **भूमि-केन्द्रित अर्थव्यवस्था** और **आध्यात्मिक पारिस्थितिकी** पर आधारित है।

**जीवन-दर्शन और धार्मिक संरचना :**

- गोंड समाज में **लिंगो-भाऊमी**, **पेन धर्म**, और प्रकृति-देवताओं का विशेष महत्व है।
- संथाल समाज में **सारना** (sacred grove) और **बोंगा** (nature spirits) जीवन और प्रकृति के मध्य गहरे आध्यात्मिक संबंध को दर्शाते हैं (Thusu, 2010)।

दोनों समाजों में प्रकृति केवल संसाधन नहीं बल्कि **जीवित वास्तविकता** (Living Reality) है—एक ऐसी सत्ता जिसके प्रति मनुष्य उत्तरदायी है।

**मुख्य विशेषताएँ (समानताएँ) :**

- सामूहिक भूमि-स्वामित्व
- सामुदायिक श्रम (collective labour)
- मौखिक ज्ञान प्रणाली
- त्योहारों और अनुष्ठानों का कृषि चक्र से सीधा संबंध

**भिन्नताएँ :**

- गोंडों की सामाजिक संरचना कबीलाई खंडों (clans) पर आधारित है, जबकि संथालों की शक्ति संरचना मांझी, परगनैत जैसे संस्थानों पर टिकी है।
- संथाल समाज में सामुदायिक नृत्यों (जैसे—डोंग) की अपनी विशिष्ट परंपरा है, जबकि गोंडी परंपरा में 'करमा', 'रीना', 'दंडारी' प्रमुख हैं।

**5.2 नागा और मिजो समाज: कबीलाई संरचना और सामुदायिक युद्ध-नैतिकता :** पूर्वोत्तर भारत के नागा और मिजो समुदाय अपनी मजबूत **कबीलाई संस्थाओं**, **युद्ध नैतिकता** (war ethos), और **मोरुंग** जैसी संस्थाओं के लिए प्रसिद्ध हैं।

**सामाजिक संगठन :**

- नागा समाज में '**मोरुंग**' युवा प्रशिक्षण केन्द्र था जहाँ सैन्य कौशल, सामुदायिक जीवन और कला का विकास होता था।
- मिजो समाज '**tlawmngaihna**' नामक सामुदायिक नैतिकता पर आधारित है, जिसका अर्थ है– *निःस्वार्थ सेवा, अनुशासन और सामुदायिक कल्याण।*

**आधुनिकीकरण का प्रभाव :** आधुनिक राज्य व्यवस्थाएँ-पुलिस, प्रशासन, स्कूल, चर्च-ने कबीलाई संरचनाओं को धीरे-धीरे कमजोर कर दिया है।

- मोरुंग जैसी संस्थाएँ लुप्तप्राय हैं,
- पारंपरिक युद्ध नैतिकता का स्थान राज्य-केंद्रित नियंत्रण ने ले लिया है,
- जनजातीय अधिकार अब चर्च और राज्य-नीति के अधीन अधिक हो गए हैं।

इसके बावजूद, नागा और मिजो दोनों समुदाय **सांस्कृतिक पुनर्जीवन**, **भाषा संरक्षण**, और **सामुदायिक पहचान निर्माण** में महत्वपूर्ण प्रयास कर रहे हैं।

**5.3 भील और मीणा समाज: वनों पर निर्भरता और उद्योगवादी चुनौती :** भारत की पश्चिमी पर्वतमाला में रहने वाले **भील** और **मीणा** समुदाय सदियों से वन-संसाधनों पर आधारित जीवन-शैली अपनाए हुए हैं।

**जीवन और अर्थव्यवस्था :**

- भीलों का जीवन शिकार, मधु-संग्रह, कृषि, हस्तशिल्प और पर्वतीय संसाधनों पर आधारित रहा है।
- मीणा समाज कृषि और स्थानीय श्रम अर्थव्यवस्था में अधिक सक्रिय है।

**आधुनिक चुनौतियाँ :** खनन उद्योग के तीव्र विस्तार (विशेषकर राजस्थान, मध्य प्रदेश और गुजरात में) ने-

- विस्थापन,
- जल स्रोतों के क्षरण,
- पर्वतीय क्षेत्रों के विनाश,
- श्रम-शोषण

को बढ़ावा दिया है (Dash, 2016)।

दोनों समुदायों में आज *पहचान-संकट, आजिविका की अस्थिरता,* और *सांस्कृतिक क्षरण* बड़े पैमाने पर दिखाई देता है।

**6. प्रतिरोध और पुनर्निर्माण की उभरती प्रवृत्तियाँ :** यद्यपि जनजातीय समुदाय संरचनात्मक चुनौतियों से जूझ रहे हैं, परन्तु उनमें अत्यंत मजबूत **सांस्कृतिक लचीलापन (Cultural Resilience)** और **सामुदायिक प्रतिरोध** देखने को मिलता है। यह प्रतिरोध केवल राजनीतिक नहीं बल्कि **ज्ञान, संस्कृति, भाषा, अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिक प्रबंधन** से भी जुड़ा हुआ है।

**6.1 सांस्कृतिक पुनर्जागरण आंदोलन (Cultural Renaissance Movements) :** पूरे भारत में जनजातीय समाज अपने सांस्कृतिक तत्वों-गीत, नृत्य, अनुष्ठान, भाषा, लोक-यादें-का पुनर्जीवन कर रहे हैं।

**मुख्य उदाहरण :**

- **गोंडी भाषा आंदोलन:** गोंडी लेखन प्रणाली, लोक-साहित्य और बच्चों के लिए गोंडी पाठ्यपुस्तकें तैयार की जा रही हैं।
- **संताली साहित्य आंदोलन:** संताली भाषा ने 2003 में संविधान की आठवीं अनुसूची में स्थान पाकर साहित्यिक नवजागरण प्राप्त किया।
- **भीली चित्रकला और भील-गायन:** आधुनिक कला प्रदर्शनों में भीली कला की वैश्विक पहचान बढ़ रही है।

यह पुनर्जागरण केवल सांस्कृतिक पुनर्निर्माण नहीं बल्कि पहचान राजनीति का सशक्त माध्यम है।

**6.2 समुदाय-आधारित वन प्रबंधन (Community-Based Forest Governance) :** FRA 2006 के बाद कई आदिवासी क्षेत्रों में समुदायों ने **वन प्रबंधन**, **जैव-विविधता संरक्षण**, और **सतत संसाधन उपयोग** पर सामूहिक नियंत्रण स्थापित किया है (Sarin, 2013)।

**सकारात्मक परिणाम :**

- अवैध कटाई में कमी
- महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि
- स्थानीय वन उपज (Minor Forest Produce) की सुरक्षा
- जल और मिट्टी संरक्षण
- सामुदायिक पर्यावरण-नैतिकता का पुनर्जीवन

यह मॉडल ऑस्ट्रेलिया, Bolivia और Kenya के Indigenous Forest Governance मॉडलों से तुलनीय है।

**6.3 स्वदेशी शिक्षा मॉडल (Indigenous Education Models) :** शिक्षा में सांस्कृतिक बहुलता को मान्यता देने की दिशा में नए प्रयास हो रहे हैं-

- **बहुभाषिक शिक्षा (MLE)**
- **मातृभाषा आधारित शिक्षण (Mother Tongue Instruction)**
- **जनजातीय कहानियों, मिथकों, ज्ञान और इतिहास को पाठ्यपुस्तकों में शामिल करना**

- **जनजातीय शिक्षकों की भर्ती :** उदाहरण के रूप में ओडिशा, आंध्रप्रदेश और झारखंड में MLE प्रोग्राम काफी सफल रहे हैं।

**6.4 डिजिटल और आर्थिक सशक्तिकरण (Digital and Economic Empowerment) :** डिजिटल तकनीक जनजातीय समुदायों के लिए नए अवसर खोल रही है—

- महिला SHG समूहों का **इ-कॉमर्स** के माध्यम से उत्पाद बिक्री
- मोबाइल आधारित कृषि सलाह
- Tribal e-marketplace
- डिजिटल स्टोरीटेलिंग के माध्यम से सांस्कृतिक दस्तावेजीकरण (Dey, 2021)
- स्थानीय पर्यटन और Homestay-based tribal entrepreneurship

यह नवाचार पारंपरिक अर्थव्यवस्था को आधुनिक अवसरों से जोड़ने का महत्वपूर्ण माध्यम बन रहा है।

**7. चर्चा (Discussion) :** तुलनात्मक अध्ययन यह दर्शाता है कि **आधुनिक विकास प्रतिमान (Modern Development Paradigm)** और **जनजातीय जीवन-दर्शन (Tribal Worldview)** के बीच गहरे स्तर पर वैचारिक, आर्थिक और सांस्कृतिक द्वंद्व मौजूद है।

आधुनिक विकास की बुनियादी संरचना—

- बाजार-केंद्रितता,
- निजी संपत्ति,
- प्रतिस्पर्धा,
- अधिकतम उत्पादन और उपभोग,
- केंद्रीकृत प्रभुत्व,

पूरी तरह उस जनजातीय जीवन-दर्शन से भिन्न है जो-

- प्रकृति-केंद्रित,
- सामुदायिक,
- परस्पर सहयोग आधारित,
- न्यूनतम उपभोग,
- उत्तरदायी संसाधन उपयोग,

पर आधारित है (Escobar, 1995)।

**विकास बनाम जीवन-दर्शन का संघर्ष :** इस द्वंद्व के कारण-

- भूमि-अधिग्रहण,
- सांस्कृतिक क्षरण,
- भाषा संकट,
- राजनीतिक हाशियाकरण,
- शिक्षा और स्वास्थ्य में असमानताएँ,

सभी समस्याएँ एक ही संरचनात्मक मूल से उत्पन्न होती हैं।

**तुलनात्मक निष्कर्ष :**

- भारत, ऑस्ट्रेलिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के स्वदेशी समुदाय समान रूप से **राज्य और बाजार शक्तियों** के बीच संघर्ष का सामना कर रहे हैं।

- अधिनायकवादी विकास मॉडल जनजातीय ज्ञान प्रणाली को 'पिछड़ा' मानता है, जबकि वास्तव में यह सतत विकास का सबसे महत्वपूर्ण आधार है।
- सांस्कृतिक पुनर्जीवन, भाषा आंदोलन, सामुदायिक वन प्रबंधन और डिजिटल सशक्तिकरण यह दर्शाते हैं कि जनजातीय समाज *सिर्फ पीड़ित नहीं, बल्कि सक्रिय परिवर्तनकारी एजेंट* भी हैं।

**समग्र दृष्टिकोण :** इसलिए, जनजातीय जीवन-दर्शन को आधुनिकता के विरोधी नहीं बल्कि *एक वैकल्पिक विकास प्रतिमान* के रूप में देखा जाना चाहिए-

जहाँ प्रकृति का सम्मान, समानता, सामाजिक सद्भाव, और टिकाऊ अर्थव्यवस्था विकास की नई दिशा दिखाते हैं।

**8. निष्कर्ष (Conclusion) :** जनजातीय जीवन-दर्शन (Indigenous worldview) केवल एक सांस्कृतिक विरासत या पारंपरिक सामाजिक व्यवस्था नहीं है, बल्कि यह मानव सभ्यता को यह सिखाने वाला एक समग्र नैतिक-दार्शनिक ढांचा है कि प्रकृति, समुदाय और मनुष्य के बीच संबंध शोषण पर नहीं, बल्कि सहअस्तित्व (co-existence) पर आधारित होने चाहिए। आधुनिकता, विकासवाद (developmentalism), और पूँजीवादी बाजार-तर्क के दबावों के बीच भी जनजातीय समाज आज इस सिद्धांत को व्यावहारिक रूप में जीते हैं। इसीलिए, जनजातीय विश्वदृष्टि केवल स्थानीय समुदायों के लिए ही नहीं, बल्कि वैश्विक समाज के लिए भी एक वैकल्पिक, सतत और न्यायपूर्ण विकास मॉडल प्रस्तुत करती है (Kothari, 2014).

**जनजातीय जीवन-दर्शन का वैश्विक महत्व :** पर्यावरणीय क्षरण, जलवायु परिवर्तन, सांस्कृतिक विघटन और मानसिक असुरक्षा के दौर में यह प्रश्न और भी तीव्र हो जाता है कि क्या आधुनिक विकास-मॉडल टिकाऊ है। इस संदर्भ में जनजातीय समाजों द्वारा प्रतिपादित मूलभूत सिद्धांत-

- *प्रकृति के साथ संतुलित संबंध,*
- *उचित और सन्तुलित उपभोग का सिद्धांत,*
- *सामुदायिक साझेदारी,*
- *अंतर-पीढ़ीय न्याय,*
- *लोकज्ञान आधारित तकनीक,* वैश्विक स्थिरता (global sustainability) के लिए महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करते हैं (UNDRIP, 2011).

**समकालीन चुनौतियों की आलोचनात्मक समीक्षा :** इस शोध-पत्र में प्रस्तुत तुलनात्मक समाजशास्त्रीय विश्लेषण दर्शाता है कि जनजातीय समुदायों पर आने वाले संकट मूलतः संरचनात्मक (structural) हैं-

- भूमि-अधिग्रहण,
- सांस्कृतिक क्षरण,
- भाषाई संकट,
- बाजारीकरण का दबाव,
- राजनीतिक हाशियाकरण,
- स्वास्थ्य असमानताएँ,
- शिक्षा में बहिष्करण,
- लैंगिक हिंसा और नई सामाजिक विकृतियाँ, केवल आधुनिक विकास योजनाओं के अनपेक्षित परिणाम नहीं हैं, बल्कि वे उस गहरी वैचारिक टकराहट को भी दर्शाते हैं जहाँ राज्य और बाज़ार की धारणाएँ जनजातीय जीवन-दर्शन से मूलतः भिन्न हैं (Nayak, 2020).

**नीति और सामाजिक हस्तक्षेप के लिए प्रमुख निष्कर्ष :** समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि नीतिगत हस्तक्षेप तभी

प्रभावी और न्यायसंगत हो सकते हैं जब वे तीन प्राथमिक सिद्धांतों पर आधारित हों:

1. **सांस्कृतिक-दार्शनिक स्वायत्तता (Cultural Autonomy)**
   - नीतियों को समुदाय की जीवन पद्धति, धार्मिक मान्यताओं, परंपरा और सामुदायिक स्वशासन का सम्मान करना चाहिए।
   - 'मुख्यधारा में एकीकरण' (assimilation) को लक्ष्य न बनाकर 'समानांतर सांस्कृतिक अस्तित्व' (pluriculturalism) को नीति-आधार बनाया जाए।
2. **सहभागी शासन (Participatory Governance)**
   - PESA, FRA, और Fifth Schedule को जमीनी स्तर पर प्रभावी बनाने के लिए वास्तविक निर्णय लेने की शक्ति ग्राम सभा और समुदायों को वापस सौंपी जाए (Bose, 2016).
   - विकास योजनाओं में "Free, Prior and Informed Consent (FPIC)" को अनिवार्य रूप से लागू किया जाए।
3. **सामाजिक, आर्थिक और भाषाई पुनरोद्धार (Revitalization Framework)**
   - मातृभाषा आधारित शिक्षा, डिजिटल दस्तावेजीकरण, लोकज्ञान अनुसंधान, और युवा पीढ़ी के लिए सांस्कृतिक प्रशिक्षण—सभी को समान रूप से प्राथमिकता दी जाए।
   - स्थानीय अर्थव्यवस्था, हस्तकला, वानिकी, पर्यटन, औषधीय पद्धति और पारंपरिक कृषि को समर्थन देकर समुदायों को बाज़ार के शोषण से संरक्षण दिया जाए।

## 9. संदर्भ :


1. Albrow, Martin. The Global Age. Stanford UP, 1996.
2. Béteille, André. The Idea of Natural Inequality. Oxford UP, 1998.
3. Bodley, John. Cultural Anthropology: Tribes and Traditions. Rowman, 2012.
4. Dash, Archana. "Mining and the Bhil Tribe." Journal of Tribal Studies, vol. 22, no. 2, 2016.
5. Descola, Philippe. Beyond Nature and Culture. U of Chicago P, 2013.
6. Dey, R. "Digital Empowerment in Indigenous Communities." Asian Journal of Rural Development, 2021.
7. Durkheim, Emile. The Elementary Forms of Religious Life. 1912.
8. Elwin, Verrier. The Tribal World of Verrier Elwin. Oxford UP, 1964.
9. Escobar, Arturo. Encountering Development. Princeton UP, 1995.
10. Fernandes, Walter. "Displacement and Development." Economic and Political Weekly, 2007.
11. Hobsbawm, Eric. Invention of Tradition. Cambridge UP, 1983.
12. IWGIA. Indigenous World Report. 2020.
13. Kujur, R. "Women in Tribal Societies." Indian Journal of Gender Studies, 2019.
14. Levi-Strauss, Claude. Structural Anthropology. Basic Books, 1963.
15. Nambissan, Geetha. "Exclusion and Education." Indian Journal of Education, 2010.
16. Pati, Biswamoy. Tribal Movements and Development. Sage, 2018.
17. Rath, Govind. "PESA and Tribal Governance." Social Change, 2006.
18. Sarin, Madhu. Forest Rights and Community Governance. Kalpavriksh, 2013.

19. Scott, James. The Art of Not Being Governed. Yale UP, 2009.
20. Thusu, Kidwai. Adivasi Religions in India. Routledge, 2010.
21. Tylor, Edward. Primitive Culture. 1871.
22. UNESCO. Atlas of Endangered Languages. 2021.
23. WHO. Health Status of Indigenous Peoples. 2019.
24. Xaxa, Virginius. Tribes and Indian National Identity. 2005.
25. Baviskar, Amita. In the Belly of the River: Tribal Conflicts over Development in the Narmada Valley. Oxford UP, 1995.
26. Rao, Ursula Sharma. "Cultural Transformations among Indigenous Communities." Sociological Bulletin, vol. 63, no. 3, 2014.
27. Majumdar, D. N. Races and Cultures of India. Asia Publishing House, 1961.
28. Misra, Tilottama. "Folklore, Identity and Resistance in Tribal India." Indian Folklife Journal, 2017.
29. Pandya, Vishvajit. Tribal Worlds: Essays in Cultural Anthropology. Inter-India Publications, 1990.
30. Ramachandran, V. "Education and Inequality among Tribal Children." Economic and Political Weekly, vol. 45, no. 44, 2010.

•